राज्य नीति के निदेशक तत्व
Directive Principles of State Policy

- मूल अधिकारों एवं निर्देशक तत्वों का एक ही उद्गम स्रोत है। 1928 के नेहरू प्रतिवेदन में, जिसमें भारत के लिए स्वराजी विधान बनाया गया था, मूल अधिकारों को स्थान दिया गया था। इन अधिकारों में प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार भी सम्मिलित था। वस्तुतः राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों का विचार 1937 के आयरिश संविधान से लिया गया, जिसे पहले स्पेन के संविधान से लिया गया था। 1945 के सप्रू प्रतिवेदन में मूल अधिकारों को स्पष्ट रूप से दो भागों में बांटा गया था- न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय और अप्रवर्तनीय। संविधान सभा के संवैधानिक सलाहकार सर बी. एन. राव ने यह सुझाव दिया था कि व्यक्तियों के अधिकारों को दो प्रवर्गों में विभाजित किया जाए- प्रथम, वे जिन्हें न्यायालय द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है, और; द्वितीय, वे जो इस प्रकार प्रवर्तित नहीं कराए जा सकते। उनके विचार में दूसरा प्रवर्ग राज्य के प्राधिकारियों के लिए नैतिक उपदेश के रूप में था। उनका सुझाव प्रारूप समिति ने भी स्वीकार किया। इसके परिणामस्वरूप न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय मूल अधिकार भाग 3 में हैं और निदेशक तत्व जो अप्रवर्तनीय हैं भाग 4 में हैं। इन दोनों का उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय तथा व्यक्ति की गरिमा और कल्याण की प्राप्ति है। कुल मिलाकर ये सिद्धांत पुलिस राज्य के विपरीत कल्याणकारी राज्य की स्थापना करते हैं।

अर्थ एवं उद्देश्य

- नीति-निर्देशक तत्वों का वर्णन संविधान के चौथे भाग में किया गया है। ये तत्व शासन व्यवस्था के मूल आधार हैं। ये तत्व हमारे संविधान की प्रतिज्ञाओं और आकांक्षाओं को वाणी प्रदान करते हैं। इस प्रकार ये सिद्धांत देश के प्रशासकों के लिए एक आचार संहिता है। राष्ट्र की प्रभुसत्ता के प्रतिनिधियों के रूप में कार्य करते समय उन्हें इन निदेशक सिद्धांतों का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि ये उन आदर्शों को प्रतिष्ठापित करते हैं जो भारत के राज्य का आधार हैं। निदेशक सिद्धांत कार्यपालिका और व्यवस्थापिका को दिए गए ऐसे निर्देश हैं, जिनके अनुसार उन्हें अपने और उचित रूप से पालन हो।
- नीति-निर्देशक सिद्धांतों का प्रयोजन शांतिपूर्ण तरीकों से सामाजिक क्रांति का पथ-प्रशस्त कर कुछ सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों को तत्काल सिद्ध करना है। इन आधारभूत सिद्धांतों का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है। सामूहिक रूप से ये सिद्धांत भारत में आर्थिक एवं सामाजिक लोकतंत्र की रचना करते हैं। निदेशक सिद्धांतों का वास्तविक महत्व इस बात का है कि ये नागरिकों के प्रति राज्य के दायित्व के द्योतक हैं। संविधान की प्रस्तावना में जिन आदर्शों की प्राप्ति का लक्ष्य रखा गया है, ये उन आदर्शों की ओर बढ़ने के लिए मार्ग-प्रशस्त करते हैं।

नीति-निदेशक सिद्धांतों का अवलोकन

- अनुच्छेद 36 से लेकर 51 तक के सोलह अनुच्छेदों में निर्देशक सिद्धांतों का वर्णन है, जो निम्नलिखित हैं-
- **अनुच्छेद 36-37:** अनुच्छेद 36 में **राज्य** शब्द को परिभाषित किया गया है। अनुच्छेद 37 घोषणा करता है कि- निदेशक तत्व देश के शासन के मूलाधिकार हैं और निश्चय ही विधि बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। ये सिद्धांत किसी न्यायालय में प्रवर्तनीय नहीं होंगे। अभिप्राय यह कि न्यायपालिका राज्य की निर्देशक तत्वों के अंतर्गत किसी कर्तव्य को निभाने के लिए विवश नहीं कर सकती।
- **अनुच्छेद-38:** राज्य लोक-कल्याण की सुरक्षा और अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करेगा।
- **अनुच्छेद-39:** राज्य अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से –
  - सभी पुरुषों तथा स्त्रियों को जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।
  - समुदाय की भौतिक संपदा का स्वामित्व तथा नियंत्रण इस प्रकार विभाजित हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो।
  - आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले कि धन और उत्पादन के साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेंद्रण न हो।
  - पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो।
  - पुरुषों तथा स्त्रियों के स्वास्थ्य और शक्ति का और बच्चों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो। आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु तथा शक्ति के अनुकूल न हो और बच्चों तथा युवाओं को शोषण से बचाया जाए।

- **अनुच्छेद-39क:** राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक व्यवस्था इस तरह से काम करे कि न्याय समान अवसर के आधार पर सुलभ हो। इस उद्देश्य के लिए राज्य उपयुक्त विधान या योजना द्वारा या किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा, ताकि कोई नागरिक आर्थिक या अन्य किसी नियोग्यता के कारण न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए।
- **अनुच्छेद 40:** राज्य ग्राम पंचायतों को स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में संगठित करेगा।
- **अनुच्छेद-41:** राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर,काम पाने, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।
- **अनुच्छेद-42:** राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए प्रसूति सहायता के लिए उपबंध करेगा।
- **अनुच्छेद-43:** राज्य जनता के लिए काम, निर्वाह, मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर, अवकाश तथा सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसर प्रदान करने का प्रयास करेगा। राज्य कुटीर उद्योगों की उन्नति के लिए विशेष ध्यान देगा।
- **अनुच्छेद-43क:** राज्य उपयुक्त विधान अथवा अन्य किसी रीति से किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, संस्थाओं या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मकारों की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाएगा।

- **अनुच्छेद 43ख:** राज्य सहकारी समितियों के स्वैच्छिक संगठन, स्वायत्त कार्यकरण, लोकतांत्रिक नियंत्रण तथा पेशेवर प्रबंधन को बढ़ाने का प्रयास करेगा।
- **अनुच्छेद 44:** राज्य भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता लागू कराने का प्रयास करेगा।
- **अनुच्छेद 45:** 86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 45 को संशोधित किया गया है। मौलिक कर्तव्यों से संबद्ध इस संशोधन के अनुसार राज्य अभिभावकों से यह अपेक्षा करता है कि वे अपने बच्चों को छह वर्ष की आयु तक प्रारम्भिक बाल्य सुरक्षा व शिक्षा प्रदान करने का प्रयत्न करेंगे।
- **अनुच्छेद 46:** राज्यजनता के दुर्बल वर्गों के, विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा।
- **अनुच्छेद 47:** राज्य सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार तथा मादक द्रव्यों और हानिकर औषधियों का निषेध करेगा।
- **अनुच्छेद 48:** राज्य कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा। गायों, बछड़ों, दूध देने वाले तथा वाहक शत्रओं की रक्षा तथा नस्लों के परिरक्षण औरसुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए उचित कदम उठाएगा।

- **अनुच्छेद 48क:** राज्य देश के पर्यावरण की संरक्षा तथा उसमें सुधार करने का और वन एवं वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।
- **अनुच्छेद 49:** राज्य ऐतिहासिक तथा राष्ट्रीय महत्व के स्मारकों की रक्षा करेगा।
- **अनुच्छेद 50:** राज्य न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करेगा।
- **अनुच्छेद 51:** राज्य

1. अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का,

2.राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाए रखने का,

3.संगठित लोगों के एक-दूसरे से व्यवहारों में अंतरराष्ट्रीय विधि और संधि बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का, तथा;

4.अंतरराष्ट्रीय विवादों की मध्यस्थता द्वारा निपटाने के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

- सामूहिक रूप से यह सिद्धांत भारत के लोकतांत्रिक प्रशासन का शिलान्यास करते हैं। निदेशक सिद्धांत नागरिकों के प्रति राज्य के कर्तव्यों के प्रतीक हैं। वास्तव में राज्य के ये दायित्व क्रांतिकारी सिद्धांत हैं, परंतु इनकी प्राप्ति का ढंग संवैधानिक है।
- राज्य के नीतिनिदेशक सिद्धांतों के माध्यम से भारतीय संविधान, वैयक्तिक स्वतंत्रता के लिए घातक, श्रमजीवियों की तानाशाही और जनता की आर्थिक सुरक्षा में अवरोध पैदा करने वाले पूंजीवादी अल्पतंत्र इन दोनों चरम सीमाओं में संतुलन स्थापित करता है।

निदेशक तत्वों का वर्गीकरण		
गांधीवादी	**समाजवादी**	**उदार लोकतांत्रिक**
ग्राम पंचायतों का संगठन (अनुच्छेद-40)| गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू एवं वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण एवं उनके वध का प्रतिषेध (अनुच्छेद-48)| मादक पेयों एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के उपभोग का प्रतिषेध (अनुच्छेद-47)|	राज्य आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा (अनुच्छेद-38(2))| कर्मकारों के लिए निर्वाह मजदूरी इत्यादि (अनुच्छेद-43)| काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता (अनुच्छेद-42)|	कुछ दशाओं में काम, शिक्षा एवं लोक सहायता पाने का अधिकार (अनुच्छेद-41)| उद्योगों के प्रबंध में कामगारों का भाग लेना (अनुच्छेद-48क)| समान न्याय और निशुल्क विधिक सहायता (अनुच्छेद-39(क))| राष्ट्रीय महत्त्व के स्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण (अनुच्छेद-49)| कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण (अनुच्छेद-50)| बालकों को निशुल्क शिक्षा पाने का अधिकार (अनुच्छेद-45)|

संविधान के अन्य भागों में दिए गए भारत के निदेशक तत्व

- संविधान के भाग-4 में अंतर्विष्ट निर्देशों के अतिरिक्त संविधान के अन्य भागों में राज्यों को संबोधित अन्य निदेश है। ये निदेश भी न्यायालय के निर्णयाधीन नहीं हैं।
- अनुच्छेद 350-क के अनुसार, प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर स्थानीय प्राधिकारी का यह कर्तव्य है कि भाषाई अल्पसंख्यक वर्ग के बालकों की शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करे।
- अनुच्छेद 351 के अनुसार, संघ का यह कर्तव्य है कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए और उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।
- अनुच्छेद 335 के अनुसार, संघ या राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में, अनुसूचितजातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा।
- यदयपि अनुच्छेद 335, 350-क, 351 संविधान के भाग-4 में सम्मिलित नहीं हैं किन्तु न्यायालयों द्वारा इन्हें नीति-निर्देशक सिद्धांतों की श्रेणी में संयोजित किया गया है।
- नीति-निदेशक तत्वों में कुछ त्रुटियां हैं, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वे बिल्कुल व्यर्थ और महत्वहीन हैं। वास्तव में संवैधानिक और व्यावहारिक दृष्टिकोण से इन तत्वों का अत्यधिक महत्व है। नीति-निदेशक तत्वों को संविधान में शामिल करने के जो कारण हैं, उन्हें इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है।

नीति-निदेशक तत्वों का महत्व

- जन-शिक्षण की दृष्टि से महत्व ये सिद्धांत राज्य के उद्देश्यों या लक्ष्यों के बारे में जानकारी देते हैं। इन सिद्धांतों के अध्ययन से पता चलता है कि राज्य एक लोक कल्याणकारी प्रशासनिक ढांचे की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है।
- सिद्धांतों के पीछे जनमत की शक्ति यद्यपि इन सिद्धांतों को न्यायालय द्वारा क्रियान्वित नहीं किया जा सकता, लेकिन इसके पीछे जनमत की सत्ता होती है, जो प्रजातंत्र का सबसे बड़ा न्यायालय है। अतः जनता के प्रति उत्तरदायी कोई भी सरकार इनकी अवहेलना का साहस नहीं कर सकती। इन निदेशक तत्वों का महत्व इस बात में है कि ये नागरिकों के प्रति राज्य के सकारात्मक दायित्व हैं ।
- **राजनीतिक स्थिरता की दृष्टि से महत्व**
- लोकतंत्र में सरकारें बदलती रहती हैं। कभी एक दल की सरकार है तो कभी किसी दूसरे दल की। सभी दलों की नीतियां अलग-अलग होती हैं। कुछ दल क्रांतिकारी विचारधारी के होते है तो कुछ रूढ़िवादी होते हैं। परंतु सरकार चाहे जिस दल की भी हो उसे इन सिद्धांतों के अनुसार ही अपनी नीतियां ढालनी पड़ेंगी। इस प्रकार निदेशक सिद्धांतों से प्रशासन में स्थिरता आयेगी।
- **संविधान की व्याख्या में सहायक**
- संविधान के अनुसार नीति-निदेशक सिद्धांत देश के शासन में मूलभूत हैं, जिसका तात्पर्य यह है कि देश के प्रशासन के लिए उत्तरदायी सभी सत्ताएं उनके द्वारा निर्देशित होंगी। न्यायपालिका भी शासन का एक महत्वपूर्ण अंग है, इस आधार पर अपेक्षा की जा सकती है कि भारत में न्यायालय संविधान की व्याख्या के कार्य में निदेशक तत्वों को उचित महत्व देंगे।

- **न्यायालयों के लिए मार्गदर्शक का कार्य**
- भारतीय न्यायालयों ने कई बार मौलिक अधिकारों से संबंधित विवादों पर निर्णय देते समय नीति-निदेशक तत्वों से मार्गदर्शन लिया है। बम्बई राज्य बनाम एफ.एम. बालसराय वाले विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 47 के आधार पर निर्णय दिया कि शासन ने मादक द्रव्य निषेध अधिनियम पास करके उचित प्रतिबंध ही लगाया था। पुनः न्यायालय ने बिहार राज्य बनाम कामेश्वर सिंह वाले विवाद में अनुच्छेद-39 के प्रकाश में यह निर्णय दिया था कि जमींदारी के अंत का उद्देश्य वास्तविक जनहित ही थी। इसी प्रकार विजय वस्त्र उदयोग बनाम अजमेर राज्य के विवाद में उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 43 के प्रकाश में न्यूनतम पारिश्रमिक अधिनियम को उचित ठहराया।
- **शासन के मूल्यांकन का आधार**

- नीति-निदेशक सिद्धांतों द्वारा जनताको शासन की सफलता व असफलता की जांच करने का मापदण्ड भी प्रदान किया जाता है। शासक दल के दवारा अपने मतदाताओं को निदेशक सिद्धांतों के सन्दर्भ में अपनी सफलताएं बतायी नहीं है और शासने शक्ति पर अधिकार करने के इच्छुक राजनीतिक दल की इन तत्वों के क्रियान्वयन के प्रति अपनी तत्परता और उत्साह दिखाना होता है। इस प्रकार निदेशक तत्व जनता को विभिन्न दलों की तुलनात्मक जांच करने योग्य बना देते हैं।
- **कार्यपालिका पर अंकुश**

- विधानसभा के सदस्यों तथा कुछ संविधान वेत्ताओं ने यह संदेह व्यक्त किया है कि राष्ट्रपति या राज्यपाल इस आधार पर किसी विधेयक पर अपनी सम्मति देने से इकार कर सकते हैं कि वह निदेशक तत्वों के प्रतिकूल है, लेकिन व्यवहार में ऐसी घटना की सम्भावना कम है क्योंकि ससदात्मक शासन प्रणाली में नाममात्र का कार्यपालिका प्रधान लोकप्रिय मंत्रिपरिषद दवारा पारित विधि को अस्वीकृत करने का दःसाहस नहीं कर सकता। डा. अम्बेडकर के अनसार, **विधायिका दवारा पारित विधि को अस्वीकृत करने के लिए राष्ट्रपति या राज्यपाल निदेशक तत्वों का प्रयोग नहीं कर सकते**।

नीति-निदेशक तत्वों का क्रियान्वयन

- भूमि सुधारों एवं कृषि के उन्नयन हेतु, जिसका उल्लेख अनुच्छेद-48 में किया गया है, पहला, चौथा, 17वां, 25वां, 42वां एवं 44वां संविधान संशोधन किए गए।
- 73वां संविधान संशोधन (1992) अनुच्छेद 40 में उल्लिखित ग्राम पंचायतों की क्रियान्वित करने की दिशा में एक कदम था।
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) अनुच्छेद 48 में उल्लिखित काम के अधिकार, मजदूरी, एवं निर्वाह इत्यादि की प्राप्ति के लिए बनाया गया।
- कुटीर उद्योगों के संवर्द्धन के लिए (अनुच्छेद 43 में उल्लिखित) **खादी व ग्रामोद्योग** खोले गए हैं। इसके अतिरिक्त सिल्क बोर्ड, हथकरघा बोर्ड, नाबार्ड आदि का भी सृजन किया गया है।
- अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों व अन्य पिछड़े वर्गों की शिक्षा की अभिवृद्धि की दिशा में मण्डल आयोग की रिपोर्ट का क्रियान्वयन किया गया, जिसे 1992 में सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायिक अनापति प्रदान, की (अनुच्छेद-46)।
- पर्यावरण की संरक्षा एवं सुधार हेतु (अनुच्छेद 48क) सरकार ने 1995 में राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण और 2010 में राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण की स्थापना की।
- जिला स्तर पर कुछ न्यायिक शक्तियों से कार्यपालिका के कार्य को संपन्न करने के लिए आपराधिक प्रक्रिया संहिता में किया गया संशोधन अनुच्छेद-50 का अनुसरण है।
- ताजमहल जैसे ऐतिहासिक स्मारकों के संरक्षण का कार्य भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) को दिया गया है जो अनुच्छेद 49के प्रावधान का अनुपालन है।
- नीति-निर्देशक सिद्धांतों के अंतर्गत अनुच्छेद-48 के अनुसरण कदम था।
- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986, वन्य जीवन अधिनियम, वन नीति, 1980 आदि कुछ ऐसे कदम हैं जो अनुच्छेद 48(क) के क्रियान्वयन की दिशा में लिए गए हैं।

मौलिक अधिकारों और निदेशक सिद्धांतों में अंतर

- इन दोनों में मुख्य भेद निम्नलिखित हैं-
- मौलिक अधिकार न्यायालयों द्वारा लागू किए जा सकते हैं, वहीं राज्य नीति के निर्देशक तत्व न्यायालय द्वारा लागू नहीं किए जा सकते अर्थात मौलिक अधिकार वाद योग्य हैं तथा नीति-निर्देशक तत्ववाद योग्य नहीं हैं।
- मौलिक अधिकार नकारात्मक हैं जबकि निर्देशक सिद्धांत सकारात्मक हैं। मौलिक अधिकारों की प्रकृति इस रूप में नकारात्मक है कि ये राज्य के किन्हीं कार्यों पर प्रतिबंध लगाते हैं। इसके प्रतिकूल नीति-निर्देशक तत्व राज्य की किन्हीं निश्चित कार्यों को करने का आदेश देते हैं।
- जहां मौलिक अधिकारों के द्वारा राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना की गई है। वहां नीति-निर्देशक सिद्धांतों द्वारा आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना होती है। मौलिक अधिकारों के अंतर्गत कानून के समक्ष समता भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार तथा किसी भी धर्म को मानने की स्वतंत्रता आदि राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना का आधार बनाते हैं। परंतु निदेशक सिद्धांतों ने आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र में लोकतंत्र की स्थापना पर बल दिया है इन सिद्धांतों के अनुसार राज्य भौतिक साधनों को सिमित लोगों के हाथों में केंद्रित न होने देने तथा उत्पादन के साधनों को सार्वजनिक हितों के उपयोग के लिए, अपनी वचनबद्धता प्रदर्शित करता है।
- मौलिक अधिकारों का कानूनी महत्व है, जबकि निदेशक सिद्धांत **नैतिक आदेश** मात्र हैं। जी.एन. जोशी के अनुसार- राज्य नीति के निदेशक सिद्धांत मानवीय आदर्शवाद के ढेर हैं, जिन्हें ऐसे व्यक्तियों ने संगृहीत किया है जो दीर्घकालिक स्वतंत्रता संग्राम की समाप्ति के पश्चात् स्वप्निल भावातिरेक की स्थिति में थे।
- मौलिक अधिकारों को (अनुच्छेद 20 तथा 21 में वर्णित अधिकारों को छोड़कर) अनुच्छेद 352 के अंतर्गत घोषित आपातकालीन स्थिति में प्रवर्तन काल में स्थगित किया जा सकता है, जबकि निदेशक तत्वों का जब तक क्रियान्वयन नहीं होता तब तक वे स्थायी रूप से स्थगन की अवस्था में ही बने रहते हैं।
- मौलिक अधिकार सार्वभौम नहीं हैं, उन पर कुछ प्रतिबंध हैं, जबकि निदेशक सिद्धांतों पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

मूल अधिकारों एवं निदेशक सिद्धांतों के मध्य संबंध एवं टकराव

- जैसा कि विदित है कि मूल अधिकार विधि के माध्यम से प्रवर्तनीय हैं क्योंकि वे प्रत्याभूत अधिकार हैं किंतु निदेशक तत्वों को इस प्रकार प्रवृत्त नहीं कराया जा सकता। इस कारण दो परिस्थितियां उत्पन्न होती हैं-
- किसी व्यक्ति दवारा मूल अधिकार का प्रयोग निदेशक तत्व से असंगत हो सकता है- एक कसाई का अपना कारोबार चलाने का अधिकार और अनुच्छेद-48 जिसमें गोवध का प्रतिषेध किया गया है।
- किसी निदेशक तत्व को प्रभावित करने वाला विधान किसी मूल अधिकार का अतिलंघन करता है या उसे क्षीण करता है। न्यूनतम मजदूरी तय करने वाला विधान अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन व्यापार के अधिकार का उल्लंघन करता है।
- संविधान का अनुच्छेद-31(ग) यह स्वीकार करता है कि ऐसी परिस्थितियां आ सकती हैं जिसमें मूल अधिकार और निदेशक तत्वों में संघर्ष हो। उसमें यह अधिकथित है कि यदि संविधान के भाग-4 में अंतर्विष्टि सिद्धांतों की क्रियान्वित करने के लिए कोई विधि अधिनियमित की जाती है तो उस पर इस आधार पर आक्रमण नहीं किया जा सकता है कि वह मूल अधिकार से असंगत है। ऐसी विधि मूल अधिकार पर अभिभावी होगी। इस प्रकार अनुच्छेद 31(ग) निदेशक तत्वों की क्रियान्वित करने वाली सभी विधियों को मूल अधिकारों पर प्राथमिकता देता है।
- मद्रास राज्य बनाम चंपकम मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप उनके सहायक के रूप से कहा की **निदेशक तत्वों को मूल अधिकार के अध्याय के अनुरूप और उनके सहायक के रूप में में कार्य करना होगा।**

- डा. पी.के. त्रिपाठी ने न्यायालय के विचारों से असहमति प्रकट करते हुए कहा कि मूल अधिकारों की श्रेष्ठ कहना सही नहीं है। दोनों का समन्वित अर्थान्वयन किया जाना चाहिए। केरल शिक्षा विधेयक (1959) में उच्चतम न्यायालय ने समन्वयकारी निर्वचन का नियम अंगीकार किया। न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि समन्वयकारी अर्थान्वयन का सिद्धांत स्वीकार किया जाना चाहिए और मूल अधिकार तथा निदेशक तत्व, दोनों को प्रभावी करने का प्रयास किया जाना चाहिए। केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1978) में न्यायालय ने एक बार फिर यह कहा कि इन दोनों में ऊंच-नीच का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। न्यायालय ने दो सिद्धांत प्रतिपादित किए-
- मूल अधिकार और निदेशक तत्व दोनों समान रूप से मौलिक हैं यद्यपि निदेशक तत्वों को न्यायालय द्वारा प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।
- मूल अधिकार और निदेशक तत्व एक-दूसरे के अनुपूरक हैं और एक-दूसरे को पूर्णता प्रदान करते हैं।
- मिनर्वा मिल्स में न्यायालय ने फिर से यह कहा कि मूल अधिकार और निदेशक तत्वों के बीच समन्वय और असंतुलन संविधान की आधारिक संरचना का आवश्यक लक्षण है। मिनर्वा मिल्स के परिणामस्वरूप अनुच्छेद-31(ग) की अंतःस्थापना के पश्चात् भी निदेशक तत्वों को मूल अधिकारों पर प्राथमिकता नहीं दी जा सकती। उच्चतम न्यायालय ने पूर्ववर्ती निर्णयों में मूल अधिकारों की श्रेष्ठता बताते हुए जो मत अभिव्यक्त किया था वह अब बदल गया है। मूल अधिकार और निदेशक तत्व एक ही धरातल पर हैं। यदि उनमें कोई संघर्ष दिखाई पड़ता है तो न्यायालय की चाहिए कि न्यायायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए उसका समाधान निकाले।
- न्यायालय किसी विधि को जो निदेशक तत्वों से असंगत है शून्य घोषित नहीं कर सकते किंतु न्यायालयों ने ऐसी विधि को विधिमान्य ठहराया है जो निदेशक तत्व की क्रियान्वित करने के लिए अधिनियमित की गई थी।
- संजीव कोक बनाम भारत कोकिंग मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत प्रकट किया कि मिनर्वा मिल्स में न्यायालय की राय का यह प्रभाव है कि अनुच्छेद 31(ग) उस रूप में विद्यमान है जिसमें वह 42वें संशोधन के पहले था। वह केवल उन्हीं विधियों को सुरक्षा देता है जो अनुच्छेद 39(ख) और (ग) की क्रियान्वित करने के लिए बनाई गई हैं। प्रोपर्टी ओनर्स एशोसिएशन बनाम महाराष्ट्र राज्य (2001) मामले में उच्चतम न्यायालय की एक पीठ ने यह राय दी है कि संजीव कोक बनाम भारत कोकिंग मामले पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए।